02 स्कूल नेतृत्व का सन्दर्भ

हृदयकांत दीवान एवं प्रीति मिश्रा



हृदयकांत दीवान



प्रीति मिश्रा

एक अच्छा स्कूल कैसा हो?

स्कूल नेतृत्व को समझने के लिए पहले इस पर विचार करना उचित होगा कि एक स्कूल क्या करता है और वे कौन से तत्व होते हैं जिनके कारण वह अच्छी तरह काम करता है। स्कूलों के हमारे सामूहिक अनुभव से हम सभी जानते हैं कि इन तत्वों की पहचान करना आसान नहीं होता। अभी तक विभिन्न पहलुओं की कोई ऐसी स्पष्ट जमावट नहीं है जो किसी स्कूल की गुणवत्ता सुनिश्चित कर सके। हाल के समय में इन पहलुओं को पहचानने और उनका वर्णन करने के प्रयास हुए हैं, पर वे बुनियादी अधोसंरचना और प्रशिक्षित शिक्षकों की आवश्यकता से आगे नहीं जा पाए हैं। कुछ मामलों में विस्तार करके उनमें पाठ्यपुस्तकों के अतिरिक्त पढ़ने–पढ़ाने की सामग्री, और बच्चों के लिए वे बुनियादी सुविधाएँ जो उनकी उपस्थिति सुनिश्चित करती हैं, को भी सम्मिलित किया गया है। स्कूलों पर किए गए अध्ययनों के अनुभव और स्कूलों के सम्पर्क में रहने वाले लोगों के किस्सों और उनसे बातचीत से प्रतीत होता है, कि ये कारक स्कूल के काम करने के तरीके को एक हद तक प्रभावित करते हैं, पर ये निश्चित रूप से सबसे महत्वपूर्ण नहीं हैं। ऐसे स्कूल भी– जो एक–दूसरे के एकदम आसपास हैं और अधोसंरचना, वातावरण, परिवेश की दृष्टि से मोटे तौर पर समान हैं तथा जिनमें समान रूप से प्रशिक्षित और शिक्षित शिक्षक हैं – बच्चों के प्रति बिलकुल अलग रवैया दर्शा सकते हैं। दूसरी तरफ इन स्कूलों से बच्चे जिस तरह का जुड़ाव महसूस करते हैं और जो परिणाम निकलते हैं वे भी बहुत भिन्न होते हैं।

> *यह स्पष्ट है कि बच्चे को एक समग्र शैक्षणिक अनुभव देने के लिए स्कूल को एक संगठित दल की तरह काम करना पड़ता है। शिक्षकों के बीच बच्चों के बारे में विचारों और जानकारियों का आदान–प्रदान होना, और आगे कैसे बढ़ें, इसके बारे में एक साझा दृष्टिकोण होना जरूरी है। शिक्षकों को न केवल कक्षाओं को रोचक बनाने की सम्भावनाओं की कल्पना करना पड़ती है बल्कि उनके लिए गतिविधियों की व्यवस्था करना और बच्चों से धैर्यपूर्वक उनको करवाना भी पड़ता है। इसलिए मतभेद को साझा करने और उसको सुलझाने के काम को एक विधिवत प्रक्रिया या व्यक्ति की सहायता से करना बेहद जरूरी हो जाता है। अधिकांश मामलों में स्कूल के प्रमुख को संयोजक की यह भूमिका निभाना पड़ती है।*

इन परिणामों की हमारी परिभाषा इस पर निर्भर करती है कि हमारी राय में स्कूल की भूमिका और उससे निकलने वाले बच्चे – एक अर्थ में स्कूल के उत्पाद – कैसे होने चाहिए। उदाहरण के लिए, ऐसी अपेक्षा की जा सकती है कि किसी स्कूल से निकलने वाले बच्चे बड़े होकर ऐसे व्यक्ति बनें जो द्रुत गति से बिना त्रुटियों के गणनाएँ कर सकें। इसका मतलब यह होगा कि वह स्कूल यह सुनिश्चित करने का प्रयास करेगा, चाहे इसके लिए उन्हें अवधारणात्मक स्पष्टता निर्मित करने की उपेक्षा करना पड़े।

वर्तमान सन्दर्भ में शिक्षा का अर्थ अधिक व्यापक हो गया है। शिक्षा के विमर्श में सर्वसहमति से बना प्रमुख दृष्टिकोण यह है कि स्कूल को बच्चों को सम्पूर्ण शिक्षा प्रदान करना है, जिसमें केवल पढ़ना, लिखना और ज्ञात सवालों को हल करना सिखाना ही नहीं है, इसके अलावा और बहुत कुछ भी है। बच्चों को दूसरे बच्चों से तालमेल बिठाने, दूसरों के दर्द के प्रति संवेदनशील होने और साथ ही दूसरों का सम्मान करने की समझ देने की भी जरूरत होती है। उन्हें नए विचार हासिल करने और स्वयं अपने विवरण रचने के काबिल बनाने की जरूरत होती है। हम जानते हैं कि मनुष्य ज्ञान को टुकड़ों–टुकड़ों में हासिल नहीं करते। किसी चीज की अधिक स्पष्ट समग्र तस्वीर प्राप्त करने के लिए अनेक विचार एक साथ समेकित किए जाते हैं। उदाहरण के लिए, बल की अवधारणा कई अन्य अवधारणाओं जैसे ऊर्जा, शक्ति, कार्य और संवेग के साथ विकसित होते हुए, पर उनसे भिन्नता के कारण और अधिक स्पष्ट होती जाती है। या, एक परिमेय संख्या का विचार जैसे–जैसे विकसित होता है, वह प्राकृतिक, ऋणात्मक व भिन्नात्मक संख्याओं की बेहतर समझ बनाने में भी सहायक होता है। अवधारणाएँ जैसे–जैसे विकसित होती हैं, वैसे–वैसे दूसरे विषयों से सम्बन्ध जोड़ने वाली कड़ियाँ भी और मजबूत होती जाती हैं। ये सीखने के कुछ महत्वपूर्ण पहलू हैं जिनकी उपेक्षा नहीं की जा सकती।

यह स्पष्ट है कि बच्चे को एक समग्र शैक्षणिक अनुभव देने के लिए स्कूल को एक संगठित टीम की तरह काम करना पड़ता है। शिक्षकों के बीच बच्चों के बारे में विचारों और जानकारियों का आदान–प्रदान होना, और आगे कैसे बढ़ें, इसके बारे में एक साझा दृष्टिकोण होना जरूरी है। प्रत्येक शिक्षक को न केवल यह पता होना चाहिए कि अन्य शिक्षक क्या, क्यों और कैसे कर रहे हैं, बल्कि एक साझा रूपरेखा भी होना चाहिए जो हर व्यक्ति की यह अनुमान लगाने में

मदद कर सके कि किसी खास परिस्थिति में अपेक्षित प्रतिउत्तर क्या है। ऐसी टीम के ठीक से काम करने के लिए एक ऐसी प्रक्रिया की जरूरत है जिसमें एकजुट तालमेल विकसित किया जा सके, उसे मजबूत बनाया जा सके और पोषित किया जा सके। दृष्टिकोणों के मतभेदों या तीखी व्यक्तिगत धारणाओं को या तो टाला जा सकता है या उन्हें सबके साथ बाँटकर उन पर चर्चा की जा सकती है। पर उन्हें रोजमर्रा के कामकाज को विकृत करने का अवसर नहीं दिया जाना चाहिए। खासकर इस तथ्य को देखते हुए कि प्रत्येक शिक्षक को दिन का काफी समय बच्चों के समूह के साथ काम करने और संवाद करने में बिताना पड़ता है। ये कार्य सत्र थकाने वाले हो सकते हैं और उन्हें रोचक बनाना हमेशा आसान नहीं होता। शिक्षकों को न केवल कक्षाओं को रोचक बनाने की सम्भावनाओं की कल्पना करना पड़ती है बल्कि उनके लिए गतिविधियों की व्यवस्था करना और बच्चों से धैर्यपूर्वक उनको करवाना भी पड़ता है। इसलिए मतभेद को साझा करने और उसको सुलझाने के काम को एक विधिवत प्रक्रिया या व्यक्ति की सहायता से करना बेहद जरूरी हो जाता है। अधिकांश मामलों में स्कूल के प्रमुख को संयोजक की यह भूमिका निभाना पड़ती है।

स्कूल प्रमुख

स्कूल प्रमुख की भूमिका को स्पष्ट करना महत्वपूर्ण है। बड़े स्कूलों के सन्दर्भ में, जहाँ अनेक शिक्षक और अनेक विभाग होते हैं, स्कूल प्रमुख की भूमिका मुख्य प्रशासक और प्रबन्धक की होती है। यह वांछनीय माना जाता है कि स्कूल प्रमुख किसी नौकरशाही तंत्र के प्रमुख की तरह कार्य करे ताकि सभी को सभी व्यवस्थाएँ समझ में आ सकें। पर ऐसे ढाँचे में सभी स्तरों पर सभी चीजों के बारे में संवाद और चर्चाओं के लिए कोई गुंजाइश नहीं होती क्योंकि स्कूल की व्यवस्था को एकदम यंत्रवत ठीक–ठीक चलना होता है। छोटी संस्थाओं में भी प्रक्रियात्मक 'समानता' और 'पारदर्शिता' की माँग की जाती है, जो स्कूल प्रमुख के विकल्पों और लचीलेपन को कम कर देती है।

क्या स्कूल प्रमुख एक प्रशासक होता है, या एक अकादमिक शिक्षक होता है? यदि हम स्कूल प्रमुख को एक प्रशासनिक प्रमुख और प्रबन्धक की भूमिका निभाने वाले की तरह देखते हैं तो हम नेतृत्व को मुख्य रूप से एक प्रबन्धन के मुद्दे की तरह देख रहे हैं। तब प्रश्न है कि सबसे असरदार प्रबन्धक कौन होगा? क्या उसमें प्रबन्धकीय कुशाग्रता की ज्यादा जरूरत होती है या कि जनसम्पर्क बनाने और लोगों से व्यवहार करने के कौशल की? यहाँ हमें फिर से यह पूछना होगा कि क्या यह पर्याप्त है, या कि टीम को किसी ऐसे व्यक्ति की भी जरूरत है जिसका शैक्षणिक रुझान हो और जो स्कूल का नेतृत्व करने में सक्षम हो। जाहिर सी बात है कि कोई ऐसा व्यक्ति स्कूल प्रमुख नहीं हो सकता जो केवल जनसम्पर्क में और लोगों से बरतने में निपुण हो, इससे कहीं अधिक की जरूरत होती है। ऐसा व्यक्ति शिक्षकों में विश्वास नहीं जगा पाएगा और न ही एक ऐसी संस्था का नेतृत्व कर पाएगा जो शिक्षा की सतत बदलती हुई समझ के साथ तालमेल बिठाने में सक्षम हो। एक अर्थ में, बुनियादी स्तर पर स्कूल प्रमुख को जिन श्रेणियों में रखा जा सकता है वे मोटे तौर पर प्रशासनिक प्रमुख या शैक्षणिक नायक की हैं।

"यदि हम स्कूल प्रमुख को एक प्रशासनिक प्रमुख और प्रबन्धक की भूमिका निभाने वाले की तरह देखते हैं तो हम नेतृत्व को मुख्य रूप से एक प्रबन्धन के मुद्दे की तरह देख रहे हैं। तब प्रश्न है कि सबसे असरदार प्रबन्धक कौन होगा? क्या उसमें प्रबन्धकीय कुशाग्रता की ज्यादा जरूरत होती है या कि जनसम्पर्क बनाने और लोगों से व्यवहार करने के कौशल की? यहाँ हमें फिर से यह पूछना होगा कि क्या यह पर्याप्त है, या कि टीम को किसी ऐसे व्यक्ति की भी जरूरत है जिसका शैक्षणिक रुझान हो और जो स्कूल का नेतृत्व करने में सक्षम हो।"

शैक्षणिक नायक से शिक्षकों के साथ संवाद करने और उन्हें सलाह देने में सक्षम होने की अपेक्षा की जाती है। वर्तमान सन्दर्भ में जब सिखाने और सीखने को पुनर्परिभाषित किया जा रहा है, और जिसमें सीखने पर अधिक जोर दिया जा रहा है, शिक्षक की भूमिका कुछ कम पूर्व–निर्धारित होती है और उसमें विकल्पों को चुनने की अधिक सम्भावना रहती है। इस सन्दर्भ में, ''शिक्षा नायक'' पद का आशय केवल किसी शिक्षण संस्था का प्रमुख ही नहीं है बल्कि ऐसा व्यक्ति है जो स्वयं भी सीख रहा है। स्कूल को तब सीखने वालों का एक समुदाय और नायक को उस समुदाय का प्रमुख माना जा सकता है। पर यह बहुत साफ नहीं है कि यह व्यवस्था कैसे काम करेगी, खासकर इस अपेक्षा को देखते हुए कि एक बड़े ढाँचे को सुसंगठित ढंग से इस प्रकार काम करना चाहिए कि हर व्यक्ति अपनी जिम्मेदारी को जाने और उसके निभाए जाने को सुनिश्चित करे।

यहाँ एक महत्वपूर्ण बात का उल्लेख करना जरूरी है कि स्कूल प्रमुख से विद्यार्थियों के माता–पिताओं और बृहद समुदाय से सहयोग प्राप्त करने की अपेक्षा भी की जाती है। इसलिए स्कूल का परिणाम और उत्पाद एक महत्वपूर्ण मुद्दा है। अनेक पालकों और सामान्य समाज की दृष्टि में, संस्थाओं की साख विद्यार्थियों द्वारा अर्जित उपाधियों, प्रमाणपत्रों और उत्तीर्ण होने की श्रेणियों से आँकी जाती है। स्कूल को अच्छा प्रदर्शन करने वाले विद्यार्थियों के झुण्ड पैदा करना पड़ते हैं। इसलिए अच्छी शिक्षा क्या है, इसको लेकर हो

सकता है कि शिक्षकों और स्कूल की कुछ विशेष दृष्टियाँ हों, पर उनके बजाय उन्हें महत्व इस बात को देना पड़ता है कि पालकों और समाज की अपेक्षा और मान्यता क्या है। स्कूल जिस माहौल में काम करते हैं उसकी अपनी अपेक्षाएँ और माँगे होती हैं। स्कूल को पालकों की अपेक्षाओं को पूरा करना पड़ता है ताकि उनकी रुचि बनी रहे और स्कूल को बच्चे मिलते रहें। यह स्वाभाविक है कि स्कूल का कामकाज उसके माहौल से और इतिहास द्वारा उस पर थोपे गए ढाँचों से प्रभावित हो। किसी नायक के आगे बढ़ने के लिए इस तथ्य को पहचानना महत्वपूर्ण हो जाता है कि एक बाहरी परिवेश होता है और एक आन्तरिक परिवेश होता है जिसके भीतर स्कूल की प्रक्रियाओं की परिकल्पना की जा सकती है।

नायक की धारणा

सामान्य दृष्टि से हम किसी भी ढाँचे में नायक की भूमिका को निम्नलिखित सूत्रों में बाँटकर उसका विश्लेषण कर सकते हैं। ये सब नेतृत्व को मोटे तौर पर वर्णित करते हैं और इन्हें पहले सभी स्कूलों के सन्दर्भ में, और फिर एक खास स्कूल के सन्दर्भ में देखने की जरूरत है:

1. हम कल्पना कर सकते हैं कि एक नायक द्वारा ऐसे लक्ष्य निर्धारित किए जाने से, जो उसकी और उसके अनुयायियों की जरूरतों को पूरा करते हों, सामाजिक रूप से उपयोगी परिणाम उपलब्ध करने की सम्भावना अधिक होती है। इससे यह लाभ होता है कि वास्तविक नेतृत्व में और केवल ''लोगों से अपनी इच्छानुसार काम करवाने'' में भेद किया जा सकता है।
2. ''रूपान्तरकारी नेतृत्व'' – सामाजिक रूप से उपयोगी लक्ष्यों को न केवल अनुयायियों की जरूरतों को पूरा करना चाहिए बल्कि उन्हें एक अधिक ऊँचे नैतिक स्तर तक ऊपर भी उठाना चाहिए। स्कूलों में यह बहुत जरूरी है क्योंकि शिक्षकों के ऊपर विद्यार्थियों के लिए एक उदाहरण पेश करने की अतिरिक्त जिम्मेदारी भी रहती है।
3. नेतृत्व को अनुकूलन कार्य की दृष्टि से देखना। अनुकूलन कार्य से तात्पर्य है विभिन्न लोगों के मूल्यों में टकरावों को सुलझाना या उस खाई को कम करना जो लोगों द्वारा आदर्श माने जाने वाले मूल्यों और उस यथार्थ के बीच होता है जिससे उनका सामना होता है। अनुकूलन कार्य के लिए मूल्यों, विश्वासों और व्यवहार में बदलाव की जरूरत होती है। समाज के भीतर चाहरदीवारों के झिरझिरेपन के कारण स्कूलों के सन्दर्भ में यह कार्य अति महत्वपूर्ण हो जाता है।

यह नेतृत्व की जिम्मेदारी है और उससे अपेक्षा भी है। स्कूल प्रमुख से यह अपेक्षा की जाती है कि वह संवाद को सुगम बनाएगा, अन्तर्दृष्टियों को स्पष्ट करेगा और उन्हें सबके साथ बाँटना सुनिश्चित करेगा। यह जरूरी है कि प्रमुख शिक्षकों को ऐसे तरीके खोजने के लिए प्रेरित और उत्साहित करे जिनसे वातावरण और विद्यार्थियों के प्रदर्शन में सुधार हो, और वह यह भी सुनिश्चित करे कि शिक्षकों और विद्यार्थियों की भागीदारी आनन्दपूर्ण और असरदार हो। नेतृत्व के लिए यह भी जरूरी है कि वह दूरदर्शी हो, परिस्थिति में होने वाले परिवर्तनों का अनुमान लगाए, यह देखे कि उस क्षेत्र में नया और रोचक क्या हो रहा है और उसके कौन–से तत्व प्रासंगिक और सार्थक हैं। उसे कठिन परिस्थितियों से निपटने में और बाहरी हस्तक्षेपों और अड़चनों से पार पाने में भी सक्षम होना चाहिए। जरूरतों की सूची तो और भी लम्बी हो सकती है, पर यह उन बातों को इंगित करती हैं जो बेहद जरूरी हैं।

नेतृत्व व्यवस्थाएँ

अन्य संगठनों और ढाँचों की तरह स्कूल भी नेतृत्व की विभिन्न व्यवस्थाओं की प्रायोगिक छानबीन कर सकते हैं। पर अधिकांश मामलों में, चाहे स्कूलों में या सामूहिक नेतृत्व को आजमा रहे अन्य ढाँचों में, किसी ऐसे व्यक्ति का सामने आना जरूरी होता है जो अधिक जिम्मेदारी वहन करने को तैयार हो। ऐसा व्यक्ति अधिक जिम्मेदारी और रुचि लेगा और किसी भी परिस्थिति के सामने आने पर उससे निपटने वाला केन्द्रीय व्यक्ति होगा। वह चर्चाओं को सुलभ बनाने के लिए और यह सुनिश्चित करने के लिए जिम्मेदार होगा कि लोग एक–दूसरे के कार्यक्षेत्र में दखल न दें तथा खुले दिमाग से दूसरों के विचारों और अभिमतों को सुनें। कई लोग जो ऐसी जिम्मेदारी हासिल करते हैं, वे नेतृत्व में दूसरों की भागीदारी सुनिश्चित करने का भरसक प्रयास करते हैं। पर इसका मतलब यह नहीं है कि उनकी जिम्मेदारी घट जाती है।

स्कूल प्रमुख से यह अपेक्षा की जाती है कि वह संवाद को सुगम बनाएगा, अन्तर्दृष्टियों को स्पष्ट करेगा और उन्हें सबके साथ बाँटना सुनिश्चित करेगा। यह जरूरी है कि प्रमुख शिक्षकों को ऐसे तरीके खोजने के लिए प्रेरित और उत्साहित करे जिनसे वातावरण और विद्यार्थियों के प्रदर्शन में सुधार हो, और वह यह भी सुनिश्चित करे कि शिक्षकों और विद्यार्थियों की भागीदारी आनन्दपूर्ण और असरदार हो।

अनेक ढाँचों में, एक व्यक्ति किसी निश्चित अवधि के लिए समन्वयक की भूमिका निभाता है। उसके कार्यकाल के बाद टीम में से कोई अन्य व्यक्ति यह जिम्मेदारी ले लेता है। इसलिए ऐसी व्यवस्था में 'नेतृत्व' एक व्यक्ति में केन्द्रित न रहकर एक बड़े समूह में बँट जाता है। किसी ढाँचे पर नेतृत्व की ऐसी प्रणाली का प्रभाव मिला–जुला होता है और ऐसी व्यवस्था के पक्ष और विपक्ष में तर्क दिए जा सकते हैं। ये दृष्टिकोण नेतृत्व की भिन्न धारणाओं से और उन कारकों से

निकलते हैं जो लोगों को अधिक गम्भीरता और सक्रियता से काम करने को प्रेरित करते हैं।

यह बहस केवल रोचक ही नहीं है बल्कि ऐसे स्कूल के सन्दर्भ में प्रासंगिक भी है जिसे ऐसे टीम या व्यक्ति को परिभाषित करने की जरूरत है जो साथियों के बीच संवाद को सुनिश्चित करे। इस संवाद को हर दिन भिन्न होने की जरूरत पड़ती है क्योंकि यह बच्चों को, उनके शैक्षिक अनुभवों को, और उनके आसपास के समाज में मौजूद चुनौतियों को सम्बोधित करता है। जाहिर है कि इसमें कोई खास बँधे–बँधाए उत्तर नहीं हो सकते क्योंकि वे व्यापक सन्दर्भ से जुड़े रहते हैं जिसमें न केवल बच्चे बल्कि उनके माता–पिता और स्कूल के सहकर्मी भी शामिल रहते हैं। यह एक सामाजिक और ऐतिहासिक सन्दर्भ का अंग होने का निहितार्थ है, हालाँकि संवाद और समाधानों का ऐसा लचीलापन, स्कूल के बहुत हद तक परिभाषित ढाँचे और उसके बड़े भाग के अपरिवर्तनीय नियमों से संचालित होने के बावजूद बनाए रखना होता है। समाधानों का स्कूल के दृष्टिकोण और उद्देश्य के अनुरूप होना जरूरी है। वे रणनीति की दृष्टि से स्वीकार्य और अमल में ला सकने वाले भी होने चाहिए।

किसी भी उत्तर के व्यावहारिक दृष्टि से स्वीकार्य होने के लिए शिक्षकों के दृष्टिकोणों में सहमति होना बहुत महत्वपूर्ण है। बड़े समूहों में से अक्सर अनौपचारिक सम्पर्क जाल निकल सकते हैं। इन संजालों की रूपरेखाएँ सुसंगत नहीं होतीं, इसलिए यह जरूरी नहीं कि उनमें शामिल सभी शिक्षकों की मान्यताएँ और शैलियाँ समान हों। शिक्षा पर होने वाली अधिकांश बहसों में बारीक सटीकता का अभाव दिखाई देता है, इसलिए अपेक्षाकृत भिन्न–भिन्न मत रखने वाले लोग भी एक ही पक्ष में हो सकते हैं। एक स्वीकार्य रणनीति बनाने के लिए सबसे महत्वपूर्ण कदम ऐसा संवाद विकसित करना है जिसमें खुली बहस हो सके। एक ऐसी प्रक्रिया हो जिसमें प्रचलन के अनुसार चुने जाने वाले लक्ष्यों और रणनीतियों पर तर्कसंगत प्रश्न उठाए जा सकें और उनके विकल्पों पर ठण्डे दिमाग से विचार किया जा सके। एक ऐसी संस्कृति निर्मित किए जाने की जरूरत है जिसमें शिक्षक परिस्थितियों और चुनौतियों का सामूहिक रूप से विश्लेषण करने और उन पर काम करने में समर्थ हों। यह स्पष्ट है कि जब शिक्षक समूह में लक्ष्यों और रणनीतियों के सम्बन्ध में एकजुटता होगी, सिर्फ तभी विद्यार्थियों में उल्लेखनीय विकास होगा। यह एकजुटता महत्वपूर्ण है क्योंकि जहाँ एक ओर कक्षाओं की अपनी पूर्व–निर्धारित समय–सारणियाँ होती हैं वहाँ सुनिश्चित प्रक्रियाओं का पालन किया जा सकता है। वहीं दूसरी ओर किसी शिक्षक के दिन–प्रतिदिन के कार्य में उसे विविध प्रकार के विद्यार्थियों का सामना करते हुए हर बार विविध प्रकार के उत्तर देने की जरूरत पड़ती है, कोई भी पूर्व–निर्धारित ढाँचे उसका मार्गदर्शन नहीं कर सकते। इसकी भविष्यवाणी करने का कोई भी तरीका नहीं है कि कक्षा की चर्चाएँ या गतिविधियाँ किस ओर ले जा सकती हैं। यदि लक्ष्यों और रणनीति के स्तर पर एक स्वीकृत सहमति हो तो उसका ध्यान रखते हुए विभिन्न शिक्षक अलग–अलग विकल्प चुन सकते हैं। यह जरूरी नहीं कि किसी काम कर रही व्यवस्था में ऊपर से दिखने वाले मतभेद, अप्रसन्नता, असंतोष और तनाव अनुचित ढंग से चलाई जा रही संस्था के लक्षण हों। ये सब वैचारिक स्वतंत्रता और उसकी अनुमति देने वाले वातावरण के परिचायक भी हो सकते हैं। किसी व्यवस्था पर फैसला देने से पहले हमें अन्य संकेतों को तलाशना होगा और गहरी छानबीन करना होगी। ऐसी सतही आम सहमति, जिसमें सभी व्यक्ति एक से दृष्टिकोण को व्यक्त करें, किसी अच्छे से संचालित परन्तु रचनात्मकता और विचारशीलता के अभाव से ग्रस्त व्यवस्था का परिचायक भी हो सकती है।

चुनौतियाँ और रणनीतियाँ

इस बात को ध्यान में रखना महत्वपूर्ण है कि स्कूल प्रमुख को अनेक दिशा निर्देशों का पालन करना पड़ता है। सभी स्कूलों को ऐसी पाठ्यक्रम रूपरेखाओं का अनुसरण करना पड़ता है जो राष्ट्रीय और राज्य स्तर पर विकसित की जाती हैं। हो सकता है कि इन रूपरेखाओं में स्थानीय स्तर पर निर्णय लेने के कुछ अवसर बचे रहते हों। परन्तु मुख्य कार्यप्रणाली को राज्य की पाठ्यक्रम अपेक्षाओं की सीमाओं और जिले की शासकीय संस्थाओं के द्वारा निर्धारित मानदण्डों के अन्तर्गत होना पड़ता है। किसी बड़े निकाय, जैसे शासकीय स्कूल व्यवस्था, द्वारा संचालित किसी स्कूल के प्रधानाचार्य के पास लचीलेपन की गुंजाइश सीमित ही रहती है। बड़े स्तर पर तय किए गए पाठ्यक्रम के विकल्पों के अलावा रणनीतियों और कार्यप्रणालियों के विकल्प भी उस व्यवस्था द्वारा पहले से तय रहते हैं जिसका वह स्कूल प्रमुख एक अंग होता है। कभी–कभी स्कूल के भीतर के ढाँचे भी पहले से तय रहते हैं, फलस्वरूप उसके पास अपनी अन्तर्प्रेरणाओं और स्थानीय जरूरतों के अनुरूप ढाँचे खड़े करने का अत्यन्त सीमित अवसर रहता है। उदाहरण के लिए, हो सकता है कि किसी स्कूल में अच्छे विज्ञान शिक्षक न हों और फलस्वरूप वह विज्ञान में ज्यादा कुछ न कर सके, पर साथ ही उसके पास इतिहास के श्रेष्ठ शिक्षक हो सकते हैं। पर इसका उसे

“एक ऐसी संस्कृति निर्मित किए जाने की जरूरत है जिसमें शिक्षक परिस्थितियों और चुनौतियों का सामूहिक रूप से विश्लेषण करने और उन पर काम करने में समर्थ हों। यह स्पष्ट है कि जब शिक्षक समूह में लक्ष्यों और रणनीतियों के सम्बन्ध में एकजुटता होगी, सिर्फ तभी विद्यार्थियों में उल्लेखनीय विकास होगा।”

कुछ लाभ नहीं मिल सकता क्योंकि स्कूल प्रमुख इतिहास को अधिक समय नहीं दे सकता। न ही वह गणित और भाषा पर अधिक जोर दे सकता है, यदि वे उसे अपने स्कूल के सन्दर्भ में अधिक महत्वपूर्ण लगें तो भी नहीं। न ही वह ऐसी समय सारणी बना सकता है जो जिला या राज्य स्तर पर सुझाए गए प्रतिरूप से बहुत भिन्न हो। कक्षा की प्रक्रियाओं और मूल्यांकन में भी उसे मोटे तौर पर समान रूपरेखाओं का अनुसरण करना पड़ता है। इसलिए स्कूल प्रमुख की भूमिका का सावधानीपूर्वक विश्लेषण करने की तथा उसमें विकल्पों की गुंजाइश निकालने और उन पर जोर देने की जरूरत है।

ऐसी स्थिति में, खासकर एक बड़ी प्रशासकीय व्यवस्था के अंग के रूप में, अपने आप को असहाय और किसी भी प्रकार की पहल करने में असमर्थ महसूस करना बहुत आसान है। यह तर्क भी दिया जा सकता है कि पहल करने की इच्छा का अभाव जिम्मेदारी लेने के लिए राजी न होने से उपजता है। स्वयं के चुने हुए विकल्पों को समझाने और उन्हें उचित ठहराने की अपेक्षा प्रचलित ढर्रे का अनुसरण करना ज्यादा सुरक्षित होता है। ऐसे परिवेश में जो अनुकूल न हो और जहाँ रूपान्तरकारी प्रक्रियाओं के लिए सहयोग मिलना आसान न हो, यह बात विशेष रूप से सही बैठती है। समाज और उसके बृहद ढाँचे से न तो स्कूल अलग–थलग होता है और न ही उसके शैक्षणिक या प्रशासनिक अंग अलग होते हैं। इसलिए यथार्थ का यह अहसास स्कूल के नेतृत्व के बारे में बात करने की सीमाएँ बाँध देता है। एक अन्य चुनौती यह है कि अक्सर स्थानीय परिवेश और निहित स्वार्थों के कारण स्कूल प्रमुख के कुछ करने की गुंजाइश सीमित हो जाती है। उसे अपना उप–प्रमुख नियुक्त करने की भी छूट नहीं रहती क्योंकि उसका नाम बृहद पदानुक्रम व्यवस्था द्वारा पहले से तय रहता है। एक अन्य परिदृश्य सम्पन्न वर्ग के निजी स्कूलों की किसी शृंखला के बच्चों के पालकों की आकांक्षाओं का हो सकता है, जो निम्न वर्ग के स्कूली बच्चों के पालकों से बहुत भिन्न हो सकती हैं, और उसी के अनुरूप स्कूल प्रमुख के द्वारा अपनाई जाने वाली रणनीति भी बहुत भिन्न होगी।

> *मैं कैसे आगे बढ़ूँ? क्या मैं तत्काल एक पुस्तकालय के लिए आग्रह करूँ, या कुछ समय के लिए पुस्तकालयों के बारे में भूल जाऊँ, या विचार–विमर्श की प्रक्रिया के लिए प्रयास करूँ? क्या कम उत्पादक लोगों के सामने एक उत्पादक व्यक्ति का उदाहरण देना सार्थक और प्रेरक होगा या वह उन्हें नाराज, कुँठित और चिड़चिड़ा बनाएगा?*

जो स्कूल किसी बड़ी शृंखला के अंग होते हैं वे उसके दर्शन और कार्यकारी रणनीति से बँधे रहते हैं। इन स्कूलों की कुछ परम्पराओं के पीछे अकसर कोई सुविचारित तर्काधार नहीं होता पर वे उनमें इतनी गहराई से जमी रहती हैं कि उन्हें बदलना या उन पर कुछ बेहतर आरोपित करना कठिन होता है। यह समझना महत्वपूर्ण है कि इस समस्या से पार पाने के लिए कोई रणनीति होना जरूरी है, लेकिन सिर्फ एक निर्णय लेकर उसे कार्यान्वित करके यह नहीं किया जा सकता। उदाहरण के लिए, एक नए स्कूल प्रमुख के नाते आपको लगे कि वर्तमान प्रातःसभा में गैर धर्मनिरपेक्ष कार्यक्रम होते हैं या उनमें मानवीय स्वतंत्रता और तार्किकता का अभाव झलकता है, पर स्कूल में आपके सहकर्मी वर्षों से यह करते आ रहे हैं। उन्हें ये प्रार्थनाएँ मूल्यवान प्रतीत होती हैं जो बृहद संस्कृति का हिस्सा भी हो सकती हैं। हो सकता है कि आपका लक्ष्य बच्चों की सक्रिय भागीदारी को बढ़ाना हो या वैकल्पिक मुद्दों पर केन्द्रित करते हुए, शैक्षणिक गतिविधि के एक अंग की तरह प्रातः सभा की परिकल्पना करना और उसकी योजना बनाना हो। लेकिन यह केवल धीरे–धीरे सभी को शामिल करते हुए दृष्टिकोणों तथा सम्भावनाओं की खुली चर्चा की सहायता से ही किया जा सकता है। सहयोगी टीम प्रातःसभा के उद्देश्य को समझे और उसके क्रियान्वयन के लिए प्रभावी कार्यक्रम की दिशा में आगे बढ़े इसके लिए विविध प्रकार के छोटे चरणों वाली कई रणनीतियाँ हो सकती हैं। एक अतिवादी तर्क यह हो सकता है कि प्रातःसभा को एकदम बन्द कर दिया जाना चाहिए क्योंकि उसका कोई औचित्य नहीं है। बच्चे सीधे अपनी कक्षाओं में जाएँ और पढ़ाई शुरू करें। एक और तरीका यह है कि बच्चे इकट्ठे हों और कुछ शारीरिक व्यायामों और खेलों से दिन की शुरुआत करें। एक तीसरा दृष्टिकोण यह हो सकता है कि प्रातःसभा में बिताया गया समय महत्वपूर्ण होता है और बच्चों के व्यक्तित्व के विकास में उसका योगदान रहता है, इसे देखते हुए उसे समाप्त नहीं किया जा सकता। इसलिए सभा का स्वरूप और उसमें निहित गतिविधियों को किसी हद तक बदला तो जा सकता है पर सभा को बनाए रखना जरूरी है। इन सभी रणनीतियों पर स्कूल में पहले से कार्यरत वरिष्ठ सहयोगियों के साथ विचार–विमर्श करना आवश्यक होगा। ये निर्णय उनकी सहमति और भागीदारी से ही क्रियान्वित किए जा सकते हैं।

यदि आप उपरोक्त तीनों रणनीतियों को तटस्थ दृष्टि से देखें तो आप हरेक में गुण और दोष, दोनों पाएँगे। एक नवनियुक्त प्रमुख की हैसियत से आप क्या चुनेंगे, यह आपके व्यक्तित्व और परिस्थितियों से तय होगा। हम जानते हैं कि ''नेतृत्व'' का आशय केवल प्रमुख की तरह नियुक्त व्यक्ति ही नहीं होता बल्कि उसमें वे अन्य लोग भी शामिल रहते हैं जो किसी अर्थ में स्कूल की भूमिका को स्पष्ट करते हैं और उसे सार्थकता प्रदान करते हैं। क्या यह निर्णय पूरी तरह इस आधार पर लिया जाना चाहिए कि प्रमुख या नेतृत्व दल किसे उपयुक्त मानते हैं, या इसमें अन्य कारकों का भी ध्यान रखना पड़ता

है? जहाँ यह स्कूल प्रमुख को व्यापक मुद्दों पर संवाद छेड़ने का अवसर देता है वहीं इसमें उसके निर्णयात्मक अधिकार के क्षीण होने की सम्भावना भी दिखाई देती है। संवाद की प्रक्रिया में कुछ थोड़े से ऐसे लोगों के द्वारा बाधा डाली जा सकती है जो अपने तौर तरीकों के बेहद आदी हो चुके हैं या किसी कारण से क्षुब्ध हैं। जहाँ संवाद की कोई सम्भावना न हो, और कुछ प्रभावशाली लोग अड़ियल रुख अपना रहे हों, वहीं प्रमुख की भूमिका और संवाद को निर्मित करने तथा उसको संरक्षित करने का उसका तरीका महत्वपूर्ण हो जाते हैं। विकल्पों को संवाद के लिए खुला रखना जरूरी है। यह सन्दर्भ पर निर्भर करता है कि स्कूल प्रमुख की तरह आप प्रातःसभा को निरस्त करने का अन्तरिम निर्णय लेते हैं या प्रार्थना और सामूहिक गान के बिना सभा करवाते हैं। इस चर्चा से यह स्पष्ट हो जाना चाहिए कि भले ही प्रमुख के विचार में सभाएँ अनावश्यक या समय बर्बाद करने वाली हों, या कि पढ़ाई के विषयों पर स्कूल को अधिक समय देने की जरूरत हो, इन मुद्दों पर दूसरों के विचार सुनना भी उसके लिए महत्वपूर्ण होता है।

स्कूल नेतृत्व के स्वरूप पर 'केन्द्रीय' व्यक्ति के काम करने के तरीके का प्रबल प्रभाव पड़ता है और जैसा हमने पहले कहा, वह तरीका उसकी परिस्थितियों से भी, यदि निर्धारित नहीं तो प्रभावित जरूर होता है। स्कूल की सन्दर्भ–परिस्थितियों के साथ ही उसमें कैसे शिक्षक हैं यह भी महत्वपूर्ण है। जब आप कोई स्कूल खड़ा करते हैं, तो आप शिक्षकों को चुन सकते हैं, तैयार कर सकते हैं और उनके काम को व्यवस्थित कर सकते हैं। उनके साथ संवाद और उसकी प्रक्रियाएँ निर्मित करना भी सम्भव होता है। पर जब आप किसी ऐसी संस्था में जाते हैं जो अपने जमे–जमाए तौर तरीकों से चल रही होती है तब आप अपनी भूमिका कैसे तय करेंगे? उदाहरण के लिए, मान लें कि किसी स्कूल में अधिकांश शिक्षक न तो स्वयं विविध प्रकार की किताबें पढ़ते हैं और न ही बच्चों को उनको पढ़ने के लिए प्रेरित करते हैं। नेतृत्व दल भी मानता हो कि शैक्षणिक पुस्तकों के अलावा अन्य पठन सामग्री व्यर्थ है क्योंकि वह परीक्षा परिणामों को बेहतर बनाने में सहायक नहीं होती, तब स्कूल प्रमुख क्या कर सकता है? इस प्रकार के वातावरण में इस बात की बहुत सम्भावना है कि स्कूल में बच्चों को पढ़ने के लिए प्रेरित करने की न तो कोई सामर्थ्य होगी, न ही व्यवस्थाएँ और शायद न ही कोई सुविधाएँ होंगी। तब प्रमुख के सामने ये प्रश्न उठ खड़े होंगे, ''मैं कैसे आगे बढ़ूँ? क्या मैं तत्काल एक पुस्तकालय के लिए आग्रह करूँ, या कुछ समय के लिए पुस्तकालयों के बारे में भूल जाऊँ, या विचार–विमर्श की प्रक्रिया के लिए प्रयास करूँ? क्या कम उत्पादक लोगों के सामने एक उत्पादक व्यक्ति का उदाहरण देना सार्थक और प्रेरक होगा या वह उन्हें नाराज, कुँठित और चिड़चिड़ा बनाएगा?''

कई अन्य उदाहरणों पर विचार किया जा सकता है। हर मामले में कुछ विकल्प सामने आएँगे। विचार करने के बाद चुने गए विकल्पों और उनकी आवश्यकताओं के बारे में सहयोगियों से परामर्श करना होगा। स्कूल को ऐसी समझ विकसित करना होगी जिसमें परिवर्तन की प्रक्रिया पर आम सहमति हो। सही रणनीति की पहचान करने के लिए उचित तर्क निर्मित करना होंगे। यह सब वास्तविक सम्भावनाओं के सन्दर्भ में देखा जाना पड़ेगा और यह भी हो सकता है कि सबके द्वारा चुनी गई कोई रणनीति सभी परिस्थितियों में श्रेष्ठ रणनीति न हो।

परन्तु कुछ स्थितियाँ ऐसी होती हैं जो आमूल परिवर्तनों की माँग करती हैं। उदाहरण के लिए, मान लें कि स्कूल के नए नेतृत्व को लगता है कि बच्चों को समुचित आदर और मूल्य नहीं दिया जाता। यदा–कदा बच्चों को जानबूझकर परेशान किया जाता है, डाँटा जाता है और कभी–कभी पीटा भी जाता है। तब हम क्या करना चाहेंगे? क्या आप ऐसी रणनीति की तलाश करेंगे जो चर्चाओं में बहुत समय बर्बाद करेगी, या आप तुरन्त इस घोषणा से शुरुआत करेंगे कि यह कतई बरदाश्त नहीं होगा और इसकी छूट नहीं दी जा सकती। या मान लें, कि ऐसी स्थिति है जहाँ आपकी टीम में से कुछ शिक्षक बच्चों को उनसे घर पर पढ़ने के लिए मजबूर करते हैं? आप जो भी कदम उठाएँगे पारस्परिक समझ विकसित होने के लिए संवाद की जरूरत पड़ेगी, पर समय बर्बाद करने के बजाय क्या सीधे–सीधे यह नहीं समझाया जा सकता कि इस तरह के आचरण की अनुमति नहीं दी जा सकती?

हम ऐसे कई और उदाहरण सोच सकते हैं, पर इतना तो स्पष्ट है कि उत्तर सरल नहीं होते, ऐसी स्थितियों में अलग–अलग लोग अलग–अलग विकल्प चुनते हैं, और चुनेंगे तथा उन्हें क्रियान्वित करेंगे। यह भी स्पष्ट है कि महत्वपूर्ण विचारणीय मुद्दा केवल सन्दर्भ ही नहीं होता बल्कि स्कूल प्रमुख का उस सन्दर्भ की व्याख्या करने का तरीका भी होता है। और यह व्याख्या हमारी धारणाओं और क्षमताओं पर आधारित होती है।

निष्कर्ष

हमने यहाँ इस बारे में बात की है कि केन्द्रीय व्यक्ति से क्या अपेक्षाएँ होती हैं और वह क्या कर सकता है, और हमने उन सीमाओं के बारे में भी बात की है जिनके भीतर उसे काम करना पड़ता है। यह स्पष्ट है कि अनेक अन्य संगठनों की तुलना में स्कूल प्रमुख पर अनेक बन्धन होते हैं। वे बन्धन 'उत्पाद' या 'उत्पादन' की प्रकृति और उसकी गुणवत्ता की परिभाषा के कारण होते हैं। वे समरूपता पर जोर देने और सभी को पसन्द आने वाले उत्पाद का निर्माण करने के प्रयास के लिए भी बाध्य होते हैं। इसके फलस्वरूप, अभिमतों में टकराव होना और अलग–अलग अध्यापकों और स्कूल के द्वारा प्रक्रियाओं के बारे में आलोचनाएँ होना स्वाभाविक है। एक प्रमुख से यह अपेक्षा की जाती है कि वह अपने स्कूल के ऐसे शिक्षकों, जो नए विकल्प चुनने और पहल करने का प्रयास करते हैं, के लिए ढाल का काम करे और उनकी बाहरी ताकतों के निर्धारण, नियंत्रण और लालफीताशाही से रक्षा करे। इसके अलावा उसे उन्हें भीतरी ताकतों से भी बचाना पड़ता है जब दृष्टिकोणों में मतभेद के परिणामस्वरूप कड़वाहट के कारण कार्यक्रमों को विफल बनाने के प्रयास किए जा

सकते हैं। एक महत्वपूर्ण जिम्मेदारी संवाद को मजबूत करना और सबके विचार सुनने और उचित बातों को स्वीकार करने का वातावरण बनाने की होती है। प्रमुख को अपने विचार प्रस्तुत करने और दूसरों के विचार सुनने में समर्थ होना जरूरी है। इसलिए उसे बाहरी अपेक्षाओं को पूरा करना पड़ता है, बाहरी और भीतरी तत्वों से संवाद बनाना पड़ता है और आन्तरिक संवाद की प्रक्रियाएँ स्थापित करना पड़ती हैं। जाहिर है कि ऐसे बड़े तंत्रों में यह करना कम सम्भव है जहाँ प्रमुख की भूमिका एक अफसरनुमा प्रबन्धक की हो जाती है जिसे निर्धारित प्रक्रियाओं और निर्देशों का सभी के द्वारा पालन करवाना सुनिश्चित करना पड़ता है।

नेतृत्व के बारे में सदा कही जाने वाली सभी उक्तियों पर भी थोड़ा विचार करें। प्रमुख को आगे रहकर नेतृत्व करना चाहिए और दूसरों के द्वारा अनुकरण के लिए उदाहरण प्रस्तुत करना चाहिए; प्रमुख को अन्य लोगों के विकास में बाधा नहीं बनना चाहिए; उसे लोगों के बारे में जानकारी का समुचित उपयोग करना चाहिए, आदि–आदि। ये सिर्फ थोड़े से उदाहरण हैं लेकिन इनमें भी कुछ भ्रम और अन्तर्विरोध पैदा हो जाते हैं। ऐसे सुझाव दिए जाते हैं कि प्रमुख को सबसे सक्षम और सबके प्रति संवेदनशील होना चाहिए ताकि सभी के द्वारा उसे इस भूमिका के लिए सबसे उपयुक्त माना जाए, या कि उसमें पहल करने और जोखिम उठाने का साहस होना चाहिए, उसे दोष अपने ऊपर लेना और श्रेय सहयोगियों को देना चाहिए, और साथ ही उसे निष्पक्ष और पारदर्शी होना चाहिए। लोग तर्क दे सकते हैं कि सबको प्रोत्साहित करने ओर अवसर देने के लिए उसे सचमुच में दूसरों की काबिलियत का आदर करने में समर्थ होना चाहिए। उसे यह स्वीकार करना चाहिए कि अनेक क्षेत्रों में दूसरे उससे बेहतर कर सकते हैं।

स्पष्ट है कि इन सभी आवश्यकताओं के पक्ष में तर्क दिए जा सकते हैं और उनके औचित्य को सिद्ध किया जा सकता है। इसलिए ठीक–ठीक यह कह सकना कठिन है कि नेतृत्व के लिए किन बातों की जरूरत होती है और उसे क्या करना चाहिए। नेतृत्व दल की भूमिका तथा उसका चयन और विकास दोनों ही सन्दर्भगत और संस्था विशेष के अनुसार होते हैं।

अपने जीवन में हम सभी ऐसे समूहों का हिस्सा रहे हैं जिन्होंने महत्वपूर्ण कार्य किए हैं। ऐसी स्थितियों में जहाँ लोगों को इकट्ठे काम करना होता है, चाहे काम कितना भी सामान्य क्यों न हो, संवाद को सुनिश्चित करने की प्रक्रिया और अधिक से अधिक गुणवत्तापूर्ण योगदान करने के लिए प्रेरित करना आवश्यक होता है। इन प्रक्रियाओं में भी एक अनौपचारिक नेतृत्व बन जाता है जिसे बाकी लोग स्वीकार कर लेते हैं। नेतृत्व की ऐसी भूमिकाएँ लचीली होती हैं और कार्य के दौरान एक व्यक्ति से हटकर दूसरे के पास जा सकती हैं। जो व्यक्ति यह भूमिका निभाएगा उसकी न तो कोई पक्की पहचान होती है, न उसका चुनाव होता है।

नेतृत्व के बारे में बहुत–सी आम धारणाएँ और वक्तव्य हमेशा व्यावहारिक नहीं होते। उन्हें सन्दर्भ के अनुसार संशोधित करना होता है। खासतौर पर दल के नेतृत्व सम्बन्धी सामान्य व्यक्तित्व प्रशिक्षण में अक्सर दोहराई जाने वाली उक्ति कि 'नायक या नेता जन्मजात होते हैं' खतरनाक है। यह मनमाने निर्णय लेने और/या गैर जिम्मेदारी को बढ़ावा देती है। दूसरी ओर, यह नई प्रचलित धारणा, कि एक बार के प्रशिक्षण सत्रों से नायक या नेता बनाए जा सकते हैं, भी उतनी ही मिथ्या है। वास्तव में, ऐसा प्रतीत होता है कि नायक ऐसे सन्दर्भों में उभरकर सामने आते हैं जिनमें पर्याप्त अनुकूल तत्व होते हैं। वे विशेष सन्दर्भ से उपजते हैं।

हमें नेतृत्व पर एक गतिविधि के रूप में ध्यान केन्द्रित करना चाहिए – जीवन के किसी भी क्षेत्र के किसी नागरिक की कुछ करने के लिए लोगों की संगठित करने की गतिविधि। हमारे मामले में यह एक स्कूल को संचालित करना है। लेकिन सामाजिक रूप से उपयोगी गतिविधि क्या है, और एक अच्छा स्कूल कैसा हो, इन बातों पर बहस होती रहेगी।

References

1. Right of children to Free and Compulsory Education Act 2009.
2. The elementary Education System In India, Exploring Institutional Structures, Processes and Dynamics, Rashmi Sharma, Vimala Ramachandran, 2009, Routledge
3. Quality Education Programme, Baran- A Baseline Study, Vidya Bhawan Education Resource Centre, Udaipur, Rajashtan
4. (Neelima Khetan, Seva Mandir, Unpublished)

प्रीति मिश्रा 2008 से विद्या भवन ऐजुकेशन रिसोर्स सैन्टर के साथ काम कर रही हैं। थोड़े समय के लिए उन्होंने स्कूल ट्रांसफोरमेंशन प्रोजेक्ट के अन्तर्गत विद्या भवन स्कूलों में भी काम किया – जिसने स्कूलों से ज्यादा उनके स्वयं के विचारों को प्रभावित किया। उनसे preeti@vidyabhawan.org पर सम्पर्क किया जा सकता है।

हृदयकांत दीवान (हार्डी) एकलव्य के संस्थापक समूह के एक सदस्य हैं और वर्तमान में विद्या भवन सोसायटी, उदयपुर के संगठन सचिव एवं शैक्षणिक सलाहकार हैं। वे शिक्षा के क्षेत्र में विभिन्न पक्षों पर पिछले 35 वर्षों से कार्य कर रहे हैं। विशेष रूप से वे शैक्षणिक नवाचार तथा विभिन्न राज्यों की शैक्षणिक व्यवस्थाओं में संशोधन के प्रयासों से जुड़े रहे हैं। उनसे vbsudr@yahoo.com पर सम्पर्क किया जा सकता है।